IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

डॉक्टर गंगा प्रसाद विमल के काव्य में प्रकृति–प्रेम

निधि मिश्रा (शोध छात्रा)

डॉ० रीता पांडेय (शोध निर्देशिका)

शोध सारांश–

वस्तुतः सृष्टि निर्माता ने प्रकृति को इतना मनोहर और विविध रूप प्रदान किया है कि उसे देखकर किसी भी मानव मन का आनंद विह्वल हो जाना स्वाभाविक है। कवि अपनी कल्पना दृष्टि से इस सौंदर्य में और भी वृद्धि कर देते हैं: जब वे अपनी सौंदर्य अनुभूति और अभिव्यक्ति कौशल के योग से उसका मर्मस्पर्शी चित्रण करते हैं।

डॉक्टर गंगा प्रसाद विमल ऐसे ही प्रकृति प्रेमी कवि थे, जिन्होंने नाना प्रकार के प्राकृतिक दृश्यों चयन करके उनका सुंदर, मनोहर और प्रभावशाली रूप चित्रित किया। उन्होंने प्रकृति वर्णन की पुरानी परिपाटी को छोड़कर प्रकृति को एक नए रूप में देखा और चित्रित किया। उसके मोहक रूप से केवल मोहित ही नहीं हुए बल्कि उसके बिगड़ते व मिटते स्वरूप को देखकर अपनी कविताओं में चिंता भी व्यक्त की। वह प्राकृतिक स्थलों को कहीं पर तीर्थ के रूप में, कहीं सद्य:स्नाता सुंदरी के रूप में, तो कहीं पर किसी दैवीय अंश के रूप में देखते हैं। वे प्रकृति को ही सारे सृजन का स्रोत मानते हैं।

बीज शब्द– प्रकृति, प्रेम–भावना, मोहक रूप, स्निग्ध वातावरण, कल्पना–जगत, नीलिमा, अनाम संबंध, मुखाकृति, चेतन, ऋणी, अंतहीन प्रेम, शिवाकृति,मूर्तिमान, अव्यक्त, रूप–लावण्य, जीवंत।

मूल आलेख–

ईश्वर ने प्रकृति को ऐसा विराट रूप सौंपा है कि उसे देखकर मानव मन प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। प्रकृति से साक्षात्कार के बाद उसकी प्रेम भावना प्रकृति से घुल-मिल कर साहित्य के रूप में उसे असाधारण बना देती है और वह मानव मात्र के लिए प्रेरणा स्रोत बन जाता है।

उत्तराखंड की खूबसूरत वादियो में जन्मे विमल जी ग्राम्य जीवन की धूप छाँव में पले-बढ़े थे। उनके आरंभिक लेखन का प्राणबिंदु उनका अपना परिवेश था। अपने गांव के उस कमरे में; जहां से वंदरपुच्छ का तिकोना सिरा दिखाई देता था। वे घंटों बैठकर प्रकृति को निहारा करते और उसके मोहक रूप को शब्दों में उतारने का प्रयास करते।

कालांतर में उनका यह प्रकृति -प्रेम इतना बढ़ा कि गांव छूट जाने के बाद जब वे दिल्ली रहने लगे तब भी वे दृश्य उनकी आँखों से विस्मृत नहीं हुये। उन्होंने पर्वताचल के संपूर्ण ग्रामीण परिवेश का यथा-तथ्य शब्द चित्र खींचा है जो पाठकों के समक्ष मूर्तिमान हो उठता है।

वे शहर की ऊपरी दिखावे भरी जिंदगी से ऊबकर पुन: गांव के उसी शांत, स्निग्ध वातावरण में लौट जाना चाहते हैं—

"मैं जी भरकर चूमना चाहता हूँ/
आभार में/ अपने उस गांव को...
शहर में मेरे साथ ही/ बहुत पहले
चला आया था अदृश्य- सा/ मेरा समूचा गांव
चले आए थे मेरे साथ/ मेरे पेड़/
फूल,पत्तियाँ,खेत,खलिहान।
यहाँ तक कि जंगल बियावान।"1

प्रकृति से उनका इतना गहरा जुड़ाव है कि वे पेड़ों,जंगलों, खलिहानों को 'मेरा',अपना कहकर संबोधित करते है| यह प्रकृति का ही प्रभाव है कि वे वहाँ बैठकर बेहद स्फूर्ति और नई ताजगी का अनुभव करते हैं—

"पर्वत वही रहता है
वियावान में
शिखरधारी अलसाये भाव में वह
धीरे से/ मुझ में आकर
सक्रिय हो जाता है।"2

उनके लिए प्राकृतिक स्थल तीर्थ के समान है-

"वहाँ फूल है आडू के
और फल/ कुछ महीने जमीन पर गिरते हुए
वहाँ एक तीर्थ है...."3

वे हरी भरी धरती पेड़ पहाड़ सभी को बारीकी से निरखते है। श्वेताभ हिमखंडों में वे सद्य:स्नाता सुंदरियो का सौन्दर्य आरोपित करते हैं—

"और अपने सिरों पर
श्वेताभ हो आए हिमखंडो को
झटकती है/ सद्य:स्नाता सुंदरियों की तरह"4

कही-कही प्रकृति में मानव रूप का आरोपण करते हुए वे पहाड़ियों के उच्च शिखरों को धूप तापने के लिए सिर उठाया हुआ मानते है—

"खुले आसमान के नीचे
घाटियों से / सिर उठाये
सर्दियों में / धूप तापती है पहाड़ियां"5

चूँकि उनका बचपन पहाड़ियों में, गांव में ही बीता अतः वे जीवन भर गांव के मोह को नहीं छोड़ पाते। वे सोते–जागते गांव को अपने सामने पाते हैं—

"सपने में था मैं/ वह गांव भी था
सीढ़ीदार खेतों में सोया"6

प्राकृतिक दृश्यों को देखकर उनका कल्पना जगत विचारवान हो उठता है। धरती और आकाश का रिश्ता अटूट है। आकाश की नीलिमा के प्रभाव से ढलान की घास हरी है। इन दृश्यों में कल्पना का सुंदर प्रयोग देखने को मिलता है—

"बेजोड़ किस्म का वह दृश्य/
पसरा है ढलान पर
अनुरूप हरी घास और नीले आकाश के बीच
होगा संबंध कोई अनाम/तभी तो मैं उसे
देख/ जुड़ता हूँ अव्यक्त से"7

वे धरती और आकाश में कोई अनाम संबंध ढूँढते है जिससे प्रभावित होकर स्वयं उस अव्यक्त सत्ता से जुड़ जाते है।

प्रकृति उनके लेखन का आधार रही है। उनकी कविताओं मे प्रकृति को भरपूर स्थान मिला हुआ है—

"मैं वही लिखता हूँ/जो स्मृति में था
मसलन खेतों में फूले पीले फूल/
पर्वतों पर जमी बर्फ़/ और हाँ...
सारे रास्ते उड़ती हुई धूल"8

वे प्राकृतिक उपादानों नदी, पर्वत, घाटियों, जंगलों से ऐसा घनिष्ठ संबंध जोड़ते हैं कि अपनी पहचान प्रकृति से ही मानते हैं—

"वहीं से शुरू करता हूं अपनी खोज और पहचान के लिए
खुद को पहाड़ और नगर को आदमी मानकर एक दूसरे की जगह/
बैठा देता हूं शून्य में"9

यह पहचान इसलिए बन पाई है क्योंकि बाल्यावस्था से ही अपने गांव के कमरे की खिड़की से बंदरपुच्छ का बर्फ से लदा, तिकोना सिरा खिड़की पर बैठ कर वह घंटों निहारा करते थे। जिनमें उन्हें कभी तो कोई महिमावान मुखाकृति और कभी ढलानों के पार घाटियों में खिले फूल दिखाई देते थे—

"वह खिड़की जिसमें मैं बंदरपुंछ
शिखर का हिममंडित/चेहरा देखता हूँ
उसी समय, ढलानों के पार/
घाटियों में
खिलते फूल को भी देखता हूँ।"10

प्रकृति को प्रतिक्षण निहारने वाले विमल जी अपने दिल्ली स्थित आवास पर, सारी सुख सुविधाओं में रहने के बावजूद भी कभी उसे विस्मृत नहीं कर पाते और अपनी स्मृतियों से निहारते रहते हैं—

"....हाँ– उन्हें मैं
स्मृति की खिड़की से देखता हूँ
देख लेता हूँ चंद्रबदनी
नीचे ढलान पर बसे गांव"11

मानव शरीर पंच तत्वों से मिलकर बना है, जिसमें मिट्टी और पानी के बिना जीवन संभव नहीं। इससे जीवन पाने वाला मनुष्य भला कैसे इन्हें भुला सकता है? इन तत्वों के प्रति तो व्यक्ति को सदैव ऋणी रहना चाहिए, इनका आभार व्यक्त करना चाहिए—

"मिट्टी या पानी से
जिनसे मैं पनपा हूँ,
वे पदार्थ/ अर्थमय हैं
अवाक किंतु चेतन है"12

वास्तव में यह धरती सारे सृजन का स्रोत है। अतः वे स्वयं को इससे उपकृत मानकर इसके प्रति आभार व्यक्त करते हैं और इसकी स्तुति करते हैं—

"कुछ भी लिखूंगा
बनेंगी/ तुम्हारी स्तुति
ओ प्यारी धरती
पहाड़ ही नहीं जन्में तुमने
न घाटियाँ
क्षितिज तक पहुंचने वाली
फैलाव में/ रचा है तुमने आश्चर्य"13

प्रकृति सीमाओं को नहीं जानती। उसके क्रियाकलाप कभी बंद नहीं होते, उत्थान– पतन चलता ही रहता है और हर बार यह एक नए रूप में हमारे सामने आती है—

"मौसम में/ वही फूल फिर से
वैसे ही लहलहाते हैं खेत14"

प्रकृति से उनका लगाव इतना गहरा है कि वे पर्वत शिखरों के पार सन्नाटे में भी गीत तलाश लेते हैं—

"ठीक जैसे सन्नाटे का गीत
अर्थवान है/ शिखरों के पार
हवा के आर पार"15

प्रकृति से वे अंतहीन प्रेम रखते हैं और उसके प्रति बेहद संवेदनशील है। अपने संपूर्ण भाव में वे प्रकृति को समेटे हुए है।

वे प्रकृति से दान स्वरूप प्राप्त नाना प्रकार के दृश्यों, वृक्षों, फलों, फूलों, वनस्पतियो सभी के प्रति आभार व्यक्त करते हैं और उसके हर रूप की उपासना करते हैं। यह प्रकृति का ही प्रभाव है कि वे वहाँ बैठकर बेहद स्फूर्ति और नई ताजगी का अनुभव करते हैं। प्रकृति इन्हें सकारात्मक सोच देती है। यह पर्वतराज हिमालय को देखकर उसे शिवाकृति का अंश मानते हैं—

"छोटे से गोलाकार
शिवाकृति मे.....
तुम में तरंगित होता है
हिमाकर वास्तव
शून्य के
अपने निजी वर्ण में
तुमने रंगा है हिमालय"16

प्रकृति के प्रति उपासना भाव को व्यक्त करने के लिए वे छोटे– छोटे बालकों का सहारा लेते हैं—

"घाटियों के फूलों को
द्वार पर बिखेरकर उन नन्हें हाथों ने कैसे किया होगा

उगते सूर्य को प्रणाम"17

प्रकृति से अलगाव ही प्रदूषण जैसी वैश्विक समस्या का भी मूल है, जिसपर कवि की दृष्टि है—

"इस बार शायद
न आए पिछले मौसम जैसे फूल
आशंकाएं विश्व व्यापी है इस बार
चेताया है वैज्ञानिकों ने/विद्वतनों ने"18

यदि हम नासमझी में पर्यावरणीय समस्याओं को अनदेखा करते रहे तो आने वाले समय में हमें भारी संकट का सामना करना पड़ सकता है। प्रकृति का दोहन मानव के लिए सर्वनाश का कारण बन सकता है। इस स्थिति से परिचित कवि आत्मिक रूप से इस पीड़ा की अनुभूति भी करते है कि अपने अस्तित्व की तलाश में मानव प्राकृतिक परिवेश से कितना कट गया है।

प्रकृति उन्हें सकारात्मक सोच देती है। अतः वे प्रकृति को असाधारण दृष्टि से और ,कभी– कभी चकित होकर उसके रूप लावण्य को देखते हैं। पेड़ों, पत्तियों, पहाड़ों को देखकर वे इतने भावुक हो उठते हैं की प्रकृति मे मानव का आरोपण करते हैं। पेड़ों की नन्ही– नन्ही हिलती हुई पत्तियाँ उन्हें बुलाती हुई प्रतीत होती हैं—

"पेड़ों की नन्ही–नन्हीपत्तियाँ
अव्यक्त से उन्माद से,
हिल– हिलकर स्वागत करती हैं"19

विमल जी प्रकृति का ऐसा बिंबात्मक चित्र खींचते हैं कि वह पाठकों के समक्ष मूर्तिमान हो उठता है। 'नगर वर्षा' नामक कविता में बरसती पानी की बूंदों का बिंबात्मक चित्र देखने योग्य है—

"क्रुद्ध वर्षा का लगातार सड़कों पर लोगों पर/बरसना
उलटी बोतलों से टपाटप /टपाटप
झर–झर टपक जाना"20

इसी प्रकार पेड़, हवा, पानी, जंगल जैसे प्राकृतिक प्रतीकों का भी जगह जगह प्रयोग किया है —

"इधर एक गर्म हवा
बह रही है इसके बावजूद"21

यह गर्म हवा दूषित वातावरण का प्रतीक है। आज मानव अपनी भौतिक सुख सुविधाओं में ज़रा भी कटौती नहीं करना चाहता। फलस्वरूप वह प्राकृतिक संपदा का दोहन करता जा रहा है। हालांकि इसके भयावह परिणाम आगे चलकर उसे और उसकी पीढ़ियों को भुगतने पड़ेंगे। इसकी चिंता विमल जी अपनी कविताओं में व्यक्त करते हैं।

काव्य सौन्दर्य के विभिन्न तत्वों जैसे बिम्बों, प्रतीकों के साथ– साथ वे अलंकारों के प्रयोग में भी प्राकृतिक तत्वों को ही चुनते हैं। उनके काव्य में मानवीकरण,उपमा, रूपक जैसे अलंकार सहज ही प्रयुक्त हुए हैं। उपमा अलंकार का उदाहरण देखने योग्य है—

"ठिठकी शीशे कतरनों सी बर्फ़
जल बूंदों मे टपकने लगी है22

पिघलती हुई बर्फ़ शीशे के कतरनों जैसी लग रही है; तो कहीं पर वही बर्फ़ दूर पहाड़ियों के शिखरों पर प्रकाशमान हो रही है। इस श्वेतवर्णी बर्फ़ में उजाले का आरोप किया गया है—

"दूर पहाड़ियों के शिखर पर बर्फ़ का उजाला"23

प्रकृति के विभिन्न रूपों को आत्मसात करते हुए वे उसे मानवीय रूप में देखते हैं और उसे जीवंत कल्पना बनाने के लिए तथा मानव मन में इसके प्रति संवेदना जगाने के लिए जगह–जगह उसका मानवीकरण करते हैं। कही नगर में वर्षा लोगों पर क्रोधित होकर लगातार बरस रही है, कहीं पर नन्ही दूब शांत होकर शयन करती दीखती है,तो कही गपोड़े अंतरिक्ष से पहाड़ बतियाते हुए प्रतीत होते है—

"स्तब्ध खड़े पर्वत / बतियाते हैं आसमान से"24

प्रकृति हमें सदैव कुछ न कुछ देती रहती है। कल–कल करती नदियां, झील, झरने, अमृत रूपी जल देकर मानव को जीवनदान देते हैं। वृक्ष बिना हाथों के फल देते हैं और एक जगह स्थिर रहते हुए भी हमें प्राण वायु प्रदान करते हैं। विभावना अलंकार का प्रयोग करते हुए प्रकृति के विभिन्न अवदानों को उन्होंने रेखांकित किया है—

"हाथ नहीं /तुम्हारे पास
देते हो इतने फल/बिना हाथ
अचल हो तुम फिर भी चलाते हो हवा"25

इनके प्रथम काव्य संग्रह विजप की लगभग सभी कविताओं में प्रकृति को भरपूर स्थान प्राप्त हुआ है। वातावरण में शीत ऋतु का प्रभाव अभी भी है। बसंत का आगमन दूर दूर तक कहीं दिखाई नहीं देता। चित्रात्मक शैली में लिखी यह सुंदर कविता पाठक को शीतकालीन प्रकृति की अनुभूति करा देती है–

"आकाश की बाहों में
सोया है/ अभी तक फरवरी का वसंत"26

प्राकृतिक चित्रों के वर्णन में नवीन उपमानों का प्रयोग सहज ही बन पड़ा है—

"खिले हुए फूल सा–आसमान
बस.....
ताकता रह जाता है"27

वे प्रकृति और मनुष्य के बीच रिश्तों की ऐसी संवेदनशीलता प्रदर्शित करते हैं कि जब भी ऋतुओं,प्राकृतिक स्थलों आदि का वर्णन करते हैं तो पाठक उनमें एक नएपन की अनुभूति करता है। यह उनकी मौलिक कल्पना शक्ति का परिणाम है कि उनके काव्य में स्थान पाकर प्रकृति सजीव हो उठती हैं। यद्यपि वे अत्यंत ठोस और प्रायः प्रचलित उदाहरण देना चाहते हैं परंतु प्रकृति वर्णनो में यह नवीनता स्वाभाविक रूप से आ पड़ती है।

इनकी कविताएँ प्रकृति के प्रत्येक मधुर, कठोर पदचाप की अगवानी करती हुई, पक्षियों के स्वरों की मानवीय मेधा के अनुकूल संवेदनात्मक व्याख्या करती है; और इतना ही नहीं; शिखर से सागर तक फैली विशाल प्राणिवत्ता का मानवीय शब्दों में मार्मिक साक्षात्कार प्रस्तुत करती है। प्रकृति और मानव चेतना के अत्यंत संवेदनशील काव्य संदर्भ इनके प्रकृतिवर्णन की विशिष्टता को रेखांकनीय बनाते हैं। तथ्यमूलक चित्रण में आवश्यकतानुसार अलंकार रहित कविताएं भी प्रचुर मात्रा में है।

प्रकृति तरह– तरह के रंग– रूप बदलती रहती है। कभी भीषण गर्मी तो कभी कंपाती ठंड, कहीं पर रेत ही रेत, तो कहीं पर वर्ष भर वर्षा । बदलते मौसम के साथ वहाँ के लोग भी अपने आप को उस वातावरण में ढालने की कोशिश करते हैं। ज़ाहिर

है प्रकृति से सामंजस्य बिठाए बगैर हमारा जीवन नहीं चल सकता। कभी– कभी विकल्प होते हुए भी मानव अपनी जन्मभूमि अपना परिवेश लगाव के कारण नहीं छोड़ता, चाहे कितने ही कष्ट क्यों न सहने पड़े। पहाड़ों के निवासी ऐसे ही होते हैं, जो कपकपाती ठंड में भी दूसरे स्थान पर पलायन नहीं करना चाहते—

"पहाड़ों पर जहाँ
सर्दियों मे/ तरसते है धूप के लिए
स्वागत नहीं होता/बादल का……..
जिसे स्वीकार है स्वयं
स्वीकृति मे भागीदार"28

प्रकृति के रोमांचक स्पर्श से पहाड़वासी दूर नहीं होना चाहते। उस स्पर्श में उन्हें अपनापन महसूस होता है। प्राकृतिक वातावरण में रहते हुए मरणशील जीव भी अमरत्व प्राप्त करने की प्रेरणा पाता है और एक नई स्फूर्ति से भर उठता है—

"हवा/ तुम छू कर आती हों पहाड़
थोड़ा– सा मुझे भी छू लो
कितना रोमांचक होगा।
पावनता का वह हल्का स्पर्श"29

प्रकृति के क्रियाकलाप कभी बंद नहीं होते जिस प्रकार मानव जीवन में उत्थान पतन होता है, उसी प्रकार प्रकृति का भी उत्थान पतन चलता रहता है। कभी पतझड़ के मौसम में पेड़ पत्तों से खाली रहता है तो बसंत के मौसम में वही पेड़ फूलों और फलों से लद जाता है—

"मौसम में/ वही फूल फिर से
वैसे ही लहलहाते है खेत
वैसे ही बीज से बट वृक्ष
सौ वर्षों के एक मौसम के बाद
तिरोहित हो जाता है शून्यांक"30

चूँकि पहाड़ी प्रदेश की प्रकृति और वहाँ के जन– जीवन के प्रति विमल जी का विशेष जुड़ाव रहा है अतः उनके पहले ही काव्य संग्रह 'विजप' की अधिकतर कविताओं में प्रकृति वर्णन प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है। संग्रह की पांचवीं कविता 'मौसम' मैं बदलते मौसम का मानवीकरण करते हुए, 'अज्ञात' नामक छठवीं कविता में घाटियों के फूलों, उगते हुए सूरज,क्षितिज का सतरंगी रूप, नीचे मैदानों में गहराती चंचल नदी और अपने ही दृश्यों को देखते ऊंचे–ऊंचे पर्वत शिखर आदि विभिन्न रूप चित्रित हुए हैं। संग्रह की 'आकाश–' 'आकाश–2' कविताओं में आकाश के विभिन्न रंगों और दृश्यों को दर्शाया है; तो 'बसंत' और 'उतरते वसंत की दो कविताएं' शीर्षकों के अंतर्गत आम्र वृक्षों के बौर और वसंत के बीतने पर मुरझाए पीपल के पत्तों का वर्णन उसके बीतने का संकेत देते हुए और वसंत को याद करता टूटा हुआ मन भी चित्रित किया है।'एक धारा', 'नवंबर', 'नगर वर्षा','दिनचर्या', जैसी कविताओं में कवि ने प्रकृति का बिंबात्मक चित्र खींचा है।

आज का मानव प्रकृति का निरंतर और बेहिसाब दोहन करता जा रहा है। परिणाम स्वरूप बाढ़, सूखा, भूकंप, सुनामी जैसी आपदाएं समय –समय पर आकर प्रकृति का रौद्र रूप दिखलाती है। ये आपदाएं महज चेतावनी नहीं बल्कि बड़ी मात्रा में पृथ्वी के सर्वनाश का कारण भी बन सकती है। यदि मानव ने इन घटनाओं से भी सबक नहीं सीखा और प्रकृति से दूरी बरकरार रखी तो इसका परिणाम और भी विनाशकारी होगा।

विमल जी की कविताएं समस्त पृथ्वीवासियों को प्रकृति से प्रेम करने का संदेश देते हुए प्राकृतिक उपयोगिता को सिद्ध करती है और उसकी रक्षा के लिए संपूर्ण मानव जाति का आह्वान करती है—

"बियावान चीखता है
लौट आओ
बच्चों लौट आओ"3

निष्कर्ष— इस प्रकार डा० गंगा प्रसाद विमल जी ने प्रकृति वर्णन में परंपरागत काव्य शैली से हटकर उसे देखने का नया नजरिया विकसित किया। समकालीन समाज की इस भाग दौड़ भरी जिंदगी में लोगों को प्रकृति से जुड़ने के लिए प्रेरित किया तथा प्राकृतिक संपदा के महत्व को रेखांकित कर उसे संजोने संवारने के लिए लोगो को प्रेरित किया।

शोध सन्दर्भ —

1–विमल, गंगा प्रसाद, पचास कविताएं, (संस्करण–2014), पृ०–96, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।

2–विमल गंगा प्रसाद, मैं वहाँ हूँ, (संस्करण 1996, पृष्ठ–19, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

3– वही, पृष्ठ–16

4–वही, पृष्ठ– 23

5–वही, पृष्ठ 23, धूप तापती है पहाड़ियां ।

6–वही, पृष्ठ– 25

7–वही, पृष्ठ– 36

8–वही, पृष्ठ– 51

9–वही, पृष्ठ– 55

10–वही, पृष्ठ– 60

11–वही, पृष्ठ– 61

12–वही, पृष्ठ– 83

13–विमल, गंगा प्रसाद, पचास कविताएं (संस्करण– 2014) पृष्ठ, 58, नई दिल्ली:वाणी प्रकाशन।

14–विमल, गंगा प्रसाद, मैं वहां हूं, (संस्करण– 1996), पृष्ठ–84, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

15–विमल, गंगा प्रसाद, अलिखित–अदिखत (संस्करण 2008), पृष्ठ– 20, दिल्ली: आर्य प्रकाशन मंडल।

16–विमल, गंगा प्रसाद, इतना कुछ, (संस्करण– 1990), पृष्ठ– 36, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन ।

17– विमल, गंगा प्रसाद, विजप, (संस्करण 1967), पृष्ठ– 15, नई दिल्ली: राधा कृष्ण प्रकाशन ।

18– विमल, गंगा प्रसाद, खबरें और अन्य कविताएं, (संस्करण– 2012), पृष्ठ–60, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

19– विमल, गंगा प्रसाद, सन्नाटे से मुठभेड़, (संस्करण– 1994) पृष्ठ– 13, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

20– विमल, गंगा प्रसाद, विजप, (संस्करण–1967), पृष्ठ– 30, दिल्ली: राधा कृष्ण प्रकाशन।

21– विमल, गंगा प्रसाद, सन्नाटे से मुठभेड़, (संस्करण–1994), पृष्ठ–43, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

22–वही, पृष्ठ–95

23–वही, पृष्ठ –95

24–वही, पृष्ठ–13

25–वही, पृष्ठ– 50

26–विमल, गंगा प्रसाद, विजप, (संस्करण1967), पृष्ठ– 34, दिल्ली: राधा कृष्ण प्रकाशन।

27–वही, पृष्ठ– 10

28–विमल, गंगा प्रसाद, मैं वहां हूं, (संस्करण– 1996), पृष्ठ– 36, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन।

29–वही, पृष्ठ– 76

30–वही, पृष्ठ– 91

31–वही, पृष्ठ–84